पढ़क

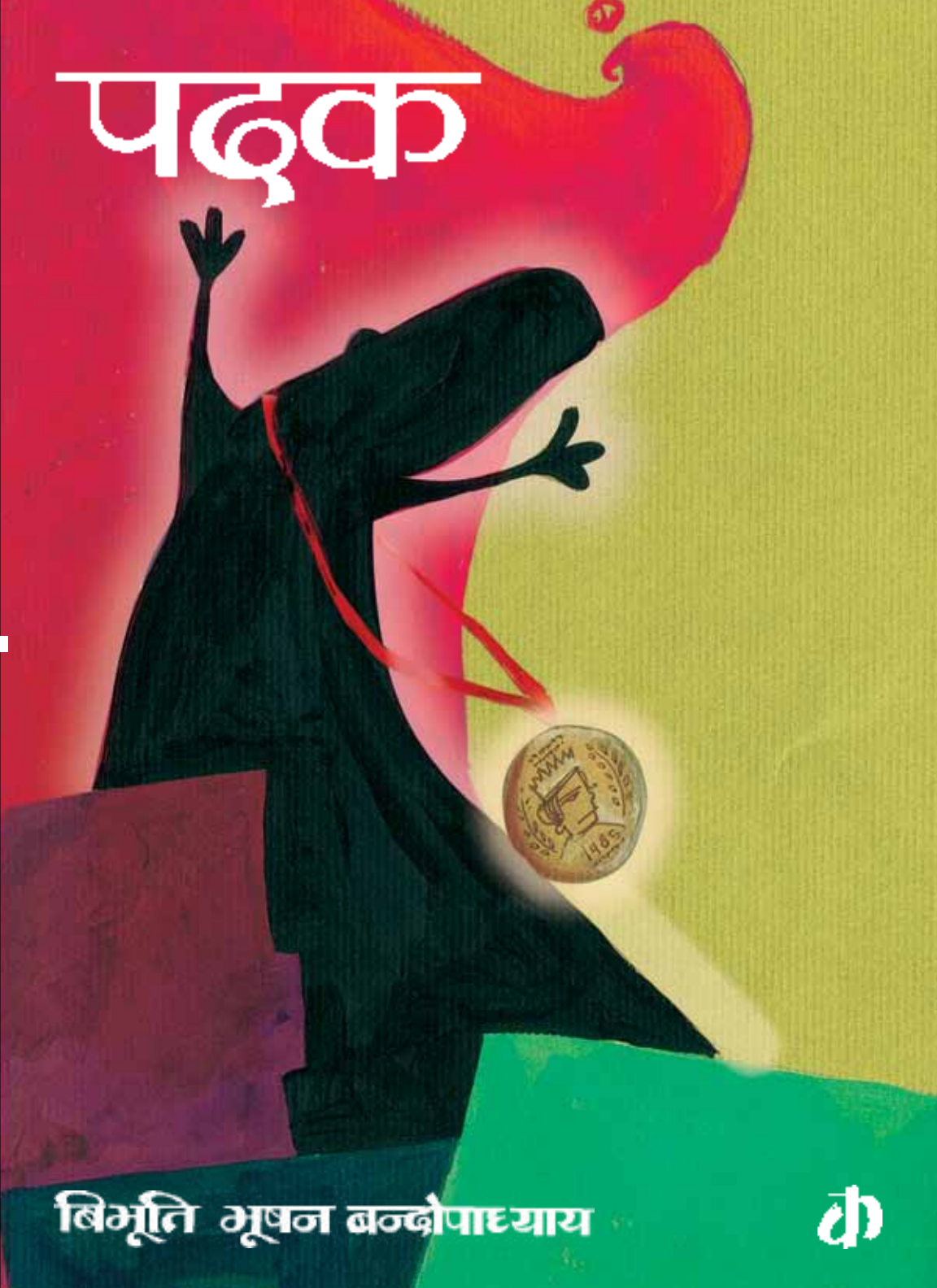

बिभूति भूषन बन्द्योपाध्याय

लेखक के बारे में

एक दरिद्र संस्कृत पंडित के घर जन्मे, **बिभूति भूषन बन्दोपाध्याय** का प्रारम्भिक जीवन कड़े संघर्षों से गुज़रा। लेखक बनने से पहले, वह एक शिक्षक, प्रचार अभिकर्त्ता, संपत्ति प्रबंधक और 'चित्रलेखा' – जो शायद बंगला की पहली फ़िल्म पत्रिका थी – के संपादक भी रह चुके हैं। उन्होंने १६ उपन्यास और दो सौ से अधिक लघु कथाएं प्रकाशित की हैं। १९२८ में छपा उनका पहला उपन्यास 'पाथेर पांचाली', और १९५५ में उस पर बनाई मशहूर निर्देशक सत्यजीत रे की पहली फ़िल्म से बिभूति भूषन का नाम आज विश्वविख्यात हैं।

पद्दक

बिभूति भूषन बन्दोपाध्याय

की बंगला कहानी पर आधारित
कथा द्वारा संक्षिप्त अनुवाद

सीरीज़ संपादिकाः गीता धर्मराजन

KATHA

प्रथम हिन्दी संस्करण 2008, दूसरा संस्करण 2010
तीसरा संस्करण 2010
कृति स्वामित्व © गीता धर्मराजन
स्वत्वाधिकार सुरक्षित। प्रकाशक की आज्ञा के बिना इस किताब के किसी भी भाग को छापना अथवा अन्य किसी पुनः प्रयोग विधि के रूप में प्रतिकृति या इस्तेमाल वर्जित है।
नई दिल्ली द्वारा मुद्रित
ISBN 978-81-89934-18-7
कवर चित्राँकन एवं डिज़ाइनः गरिमा गुप्ता
चित्राँकनः एम डी हुसैन एवं दिलिप कुमार मंडल

कथा एक पंजीकृत अलाभकारी संस्था है। कथा का मुख्य उद्देश्य है बच्चों और बड़ों में पढ़ने में रुचि एवं इससे मिलनेवाली खुशी को बढ़ावा देना।

ए 3 सर्वोदय एनक्लेव, श्री औरोबिन्दो मार्ग
नई दिल्ली–110017
दूरभाषः 4182 9998, 2652 4511
फैक्सः 2651 4373
ई मेलः kathakaar@katha.org, इंटरनेटः http://www.katha.org

1

इस घटना को लगभग चार साल हो चुके हैं। कभी-कभी तो लगता है कि वो सब एक सपना था। पर फिर यह एहसास होता है कि वह मैंने वाक़ई अनुभव किया था। उस घटना को एक भ्रम कह कर टालना सही न होगा।

पहले तो मैं आपको यकीन दिला दूँ कि मैं पिछले दस सालों में शरीर व दिमाग़ दोनों से एकदम चुस्त रहा हूँ। मैंने बिल्कुल साधारण जीवन जिया है – एक अध्यापक और उसकी नीरस जीवनचर्या।

भ्रमः माया, कल्पना मात्र

उस दिन जब मैं चौथी कक्षा को पढ़ा रहा था, मैंने देखा कि कामाख्या सुधीर से कुछ छीनने की कोशिश कर रहा था। जब उसे डाँटा, तो कामाख्या ने कहा कि वह तो सिर्फ़ सुधीर के पदक को देखना चाहता था।

मुझे लगा, होगा कोई पदक जिसे सुधीर ने अपने इलाके की किसी तैराकी या बैडमिंटन प्रतियोगिता में जीता था। मैंने दोनों लड़कों को दोस्ती और भाईचारे पर लम्बा भाषण दे डाला।

फिर मैंने सुधीर को वह पदक लाने के लिए कहा। एक लापरवाह सी निगाह उस पर डाली, और मैं सीधा उठकर बैठ गया।

वह कोई साधारण पदक नहीं था। काफ़ी पुराना था। एक तरफ़ बेहतरीन नक्काशी, और एक तरफ़ रानी विक्टोरिया के यौवन की तस्वीर और कुछ लिखाई थी।

कमरे में रोशनी कम थी और मैं अपना चश्मा स्टाफ-रूम में भूल आया था। इसलिए मैंने एक छात्र से पढ़ने को कहा।

वाक़ई: सच में
बेहतरीन: बहुत अच्छा
नक्काशी: खुदाई का काम

उसने धीरे-धीरे, बड़ी चेष्टा करके पढ़ा – “क्रिमिया, सेवस्तोपॉल, विक्टोरिया रेजिना।” दूसरी तरफ़ लिखा था– सार्जेन्ट एस बी पार्किन्स्, छटवाँ ड्रैगन गार्डस्, १८५४।

नीलमोनि दास लेन के रहने वाले सुधीर साहा के पास यह पदक आया कैसे? मैंने पूछा तो वह बोला कि यह पदक उसके दादाजी का है। एक अंग्रेज़ ने उन्हें दिया था।

सार्जेन्ट पार्किन्स – जो भी वे थे, उन्हें यह पदक क़रीब छियासी साल पहले मिला होगा। यदि वे आज जीवित होते, तो उनकी उम्र कम से कम एक सौ साल होती!

उस दिन शनिवार था। मैंने सप्ताहांत में अपने गाँव जाने का फ़ैसला किया था। सोचा कि यह पदक साथ ले जा कर जेठामोशाई को दिखाउँगा, जो गाँव के बड़ों में से एक थे।

जेठामोशाई को इतिहास में बहुत रुचि थी। मुझे लगा वे पदक देखकर खुश होंगे। मैंने सुधीर से कहा कि मैं उसे वह पदक सोमवार को लौटा दूँगा।

जेठामोशाईः ताऊ, पिता के बड़े भाई

2

पठशाला के बाद मैंने अपना बैग लिया और शियालदाह रेलवे स्टेशन से ढाई बजे वाली ट्रेन पकड़ी। जब ट्रेन मेरे गाँव पहुँची, तो साढ़े पाँच बज रहे थे। जब तक दो मील चलकर मैं घर पहुँचा, अंधेरा हो चला था।

मेरे गाँववाले घर में कोई नहीं रहता था। जब भी मैं वहाँ जाता, पड़ोस की एक वृद्ध महिला आकर मेरे लिए खाना पका देती थीं। उन्होंने बताया कि मेरे बचपन का मित्र वृन्दावन

भी कुछ पन्द्रह दिन के लिए आया हुआ है।

मुझे यह जानकर बहुत खुशी हुई और मैंने उससे तुरंत मिलने का निश्चय किया। सोचा, लगे हाथों उसे पदक भी दिखा दूँगा।

वृन्दावन का घर नदी पार था। जब मैं पुल पार कर रहा था, तो मैंने देखा कि नदी में बाढ़ आ रही है।

पानी किनारों पर चढ़, वहाँ स्थित खेतों में घुस गया था। मैं वहाँ खड़ा-खड़ा बहुत देर तक नदी को देखता रहा। अंधेरा बढ़ता जा रहा था। चमगादड़ इधर-उधर फड़फड़ा रहे थे। दूर तक कोई भी नज़र नहीं आ रहा था।

लगे हाथः साथ-साथ

अचानक मेरे भीतर एक अजीब-सी इच्छा जागी, नदी में कूद जाने की। लहराते, बढ़ते पानी को देख वह और भी बढ़ने लगी। मुझे तैरना नहीं आता। यदि मैं कूद गया, तो वह मेरा निश्चित अंत होगा।

पर नदी में कूदने की इच्छा और बढ़ती ही जा रही थी, मानो किसी ज्वर की तरह! यदि मैं वहाँ थोड़ी देर और खड़ा रहा, तो मुड़कर इस भयानक जगह से लौट न पाऊँगा। मेरे पैरों में एक अजीब-सा भारीपन आ गया। वहाँ से हिलना आसान न था।

जैसे ही मैं वृन्दावन के घर की तरफ़ मुड़ा, तो वह चाह चली गई। मैं हैरान था। इस तरह की अजीब इच्छा मुझमें आई कैसे? और आई भी तो इतनी ताकत से क्यों जकड़ लिया मुझे?

3

मुझसे इतने समय बाद मिलकर वृन्दावन बहुत खुश हुआ। क्योंकि उस शाम गर्मी काफ़ी थी, उसने सुझाव दिया कि क्यों न हम छत पर चलें और खाना तैयार होने पर ही नीचे आएँ।

छत पर सिर्फ़ एक कमरा था, जिसका उपयोग वृन्दावन के चाचा करते थे। बांस और ईंटों का ढेर छत पर पड़ा देख मैंने अनुमान लगाया कि इस कमरे की मरम्मत हो रही होगी।

हम अभी कमरे में पहुँचे ही थे कि फिर मुझे उसी अजीब उलझन ने घेर लिया। मैंने वृन्दावन से एक गिलास पानी मँगवाया।

मैं छत पर टहलने लगा। अब काफ़ी अंधेरा हो गया था। हवा में एक चुप्पी-सी थी। मेरे पैर छत की मुंडेर की तरफ़ मुड़े, जहाँ ईंटों का ढेर पड़ा हुआ था। मैं वहाँ खड़ा रहा, मुंडेर से नीचे झाँकता हुआ।

"कूदो!" मेरे अन्दर किसी ने उकसाया। बार-बार उकसाया।

वह मजबूरी, वह चाह मुझे बेबस कर रही

थी। हाँ, मुझे अब कूद जाना चाहिए ... इसी वक़्त।

"चलो, अंदर चलें। माँ हमारे लिए चाय भेज रही हैं," वृन्दावन की आवाज़ अचानक सन्नाटे को चीरती हुई पहुँची। "तुम मुंडेर की दीवार के इतने पास क्यों खड़े हो?" उसने आश्चर्य से पूछा। मैं कुछ नहीं बोला।

फिर हम कमरे में बैठ बातें करने लगे। जल्द ही चाय-नमकीन आ गई। थोड़ी देर बाद वृन्दावन नीचे गया पता लगाने कि खाने में कितनी देर लगेगी।

कमरे में गर्मी थी, तो मैं बाहर आ गया। फिर वही मजबूरी, हर पल बढ़ती हुई, मुझे खींचती, जकड़ती हुई।

"अभी कूदने का समय है। कोई रोकने वाला नहीं। यही पल है ..." मुझे लगा जैसे मेरा दिमाग़, मेरा पूरा शरीर सुन्न हो गया है।

एक चीख़ ने मुझे चौंका दिया। वृन्दावन ने दौड़कर मुझे पकड़ा और वापस खींच लिया। "ये क्या कर रहे थे? मुझे लगा तुम कूदने वाले हो! यदि तुम्हारे पैर रस्सियों में उलझ न गए होते तो ..."

मेरा सिर घूम रहा था। मुझे चक्कर आ रहे थे। "पता नहीं," मैं बड़बड़ाया। कंधों पर हाथ रख, वृन्दावन मुझे अन्दर ले गया और पलंग पर लिटा दिया।

जब मैंने करवट ली तो जेब में कुछ सख़्त-सा लगा। वह सुधीर का पदक था, जिसके बारे में मैं भूल ही गया था।

मैंने वृन्दावन को दिखाया। घर में सबने उस पदक को देखा और सराहा। खाने के तुरंत बाद मैंने आज्ञा ली और अपने घर की ओर निकल पड़ा।

4

जैसे ही बाहर कदम रखा, मुझे फिर उसी डर ने घेर लिया। घर में कदम रखते ही डर और भी बढ़ गया। मैंने इस घर में कई रातें अकेले काटी थीं, पर इस तरह पहले कभी नहीं लगा था। मुझे लगा शायद मेरी तबियत ठीक नहीं है।

लाईट बन्द करके मैं बिस्तर पर लेट गया। खिड़की खुली थी। मुझे पता नहीं मैं कितनी देर सोया, पर जब उठा, तो लगा कि कोई खिड़की के बाहर खड़ा है।

ऐसा लगा जैसे लौ-सी जलती दो आँखें मुझे ताक रही हैं। मेरे बस सिर उठाने की देर थी और वह मुझे दिखाई दे जाता।

पर मैं चुपचाप लेटा रहा, आँखें कसकर बन्द कर लीं। मैंने सोने की बहुत कोशिश की।

फिर कमरे में एक तेज़ बदबू फैल गई। क्या था? मरा हुआ चूहा? या कोई दवाई? ऐसा लगा जैसे सड़ते हुए माँस, आयोडीन और मलहम का मिश्रण हो।

मुझे कमरे के बाहर एक दुर्भावपूर्ण उपस्थिति का आभास हुआ। ऐसी उपस्थिति जो हिंसक और अशान्त थी – जो मुझे उसकी तरफ़ देखने के लिए मजबूर कर रही थी।

लेकिन अंदर कहीं मुझे पता था कि वह जो भी था, खिड़की के इस तरफ़ नहीं आ पाएगा। मेरे पूर्वजों ने उस सर्वोच्च सत्ता की यहीं तो स्थापना की थी। मैं यहाँ सुरक्षित था।

दुर्भावपूर्णः बुरी भावनाओं से भरा, बुरा चाहने वाला
सर्वोच्च सत्ताः ईश्वर

फिर खिड़की पर खटखटाने की आवाज़ आई। जैसे कोई उस तरफ़ मेरा ध्यान खींच रहा हो। एक बार, दो बार, तीन बार। क्या मैं मदद के लिए चिल्लाऊँ?

फिर अचानक मुझे याद आया। वह नेवला! वह खिड़की के बाहर रहता था। आज शाम ही तो मैंने उसे देखा था। ज़रूर वही नेवला होगा, वहाँ कीड़ों के लिए टटोल रहा होगा।

यह सोचकर मुझमें कुछ साहस तो आया, पर सिर्फ़ एक पल के लिए। मैं सो न सका।

सारी रात मुझे ऐसा लगता रहा कि मैं अकेला नहीं हूँ। कोई मुझे देख रहा है। और फिर वही हल्की-सी खटखटाहट जैसे कि मुझे कह रही हो, “उठो! खिड़की की तरफ़ घूमो और बाहर देखो।” मेरा बिस्तर पसीने से नम हो गया।

आख़िर सुबह हो गई। पूरा कमरा सूरज की किरणों से नहा गया। मैंने सड़क पर आवाज़ें सुनी और लगा कि मेरा डर चला गया है। मैं सुबह नौ बजे तक सोया।

5

उस दिन मैं जेठामोशाई से मिलने गया। "अंदर आओ, सुरेन। बहुत दिन बाद आए। कैसे हो?" मेरे जवाब का इंतज़ार किए बिना वे कहने लगे, "मैंने तुम्हें कल देखा था। मैं छत पर था। कल रात कितनी गर्मी और उमस थी न?

"तुम शायद वृन्दावन के यहाँ से लौट रहे थे। बहुत रात हो चुकी थी। इसलिए तुम्हें आवाज़ नहीं दी। तुम्हारे साथ एक लम्बा-सा आदमी भी था। कौन था वह? तुम्हारा दोस्त ही था न? बंगालियों में इतने अच्छे कद-काठी का आदमी देखकर अच्छा लगता है।"

"एक लम्बा आदमी? मेरे साथ?"

मेरी आश्चर्य भरी निगाह देखकर जेठामोशाई उलझन में पड़ गए।

"तुम कह रहे हो तुम्हारे साथ कोई नहीं था? तुम अकेले थे? लगता है मेरी आँखों की रोशनी फीकी पड़ती जा रही है ..."

"उम्र बढ़ती जा रही है, मोशाई!" मैंने उन्हें छेड़ा और कहा, "नहीं। दरअसल आपके घर के सामने जो आम का पेड़ है, यह उसी के कारण है। वह अंधेरे में ऐसे छल करता है। इसलिए स्वाभाविक है कि आपको लगा कि मेरे साथ कोई है।"

जेठामोशाई को मुझ पर विश्वास नहीं

हुआ। "मुझसे ग़लती नहीं हो सकती। जब तुमने आम के पेड़ के नीचे टॉर्च जलाई, तुम मुझे साफ दिखाई दिए।

"मैंने उसे तुम्हारे पीछे चलते देखा। फिर तुमने टॉर्च बुझाई और तुम अंधेरे में लुप्त हो गए। पर मैं उसे देख पा रहा था, ठीक तुम्हारे पीछे। ये सही है कि मैं उसका चेहरा ठीक से नहीं देख सका, पर मैंने यह ज़रूर देखा कि वह तुमसे कुछ एक इंच लम्बा था। मेरी आँखों ने धोखा नहीं खाया है।"

मैंने उन्हें फिर दिलासा दिलाया कि मेरे साथ कल रात कोई नहीं था।

६

अगले दिन कलकत्ता लौटने से पहले मैं फिर वृन्दावन से मिलने गया। उस रात का डर दिन के उजाले में इतना छोटा लग रहा था कि मैंने उसका कोई ज़िक्र नहीं किया। मैं स्टेशन के लिए क़रीब शाम पाँच बजे निकला। अंधेरा हो रहा था।

मुझे बड़े बौरी पारा बाग़ से गुज़रना था। आधे रास्ते चल कर मैं अचानक पीछे मुड़ा।

पता नहीं मैंने ऐसा क्यों किया, पर जिस पल मैं मुड़ा, मुझे लगा कि मुझ पर बिजली गिरी हो!

वो कौन था जो वहाँ खड़ा था, सड़क से कुछ दूर हटकर?

लम्बा, सर पर एक पतला हेल्मेट, कुछ उस प्रकार का टोप जैसा कि हम तस्वीरों में अंग्रेज़ सिपाहियों को पहने हुए देखते हैं।

वह घास पर खड़ा मुझे घूर रहा था।

मैं उसकी तरफ़ चल पड़ा। मुझे पता लगाना ही था कि वह कौन है।

अचानक मेरे पैर ज़ोर से काँपने लगे। मेरा सारा शरीर सुन्न हो गया। एक और मिनट और मैं बेहोश ही हो गया होता।

भाग्य से, ठीक उसी समय कोई लालटेन पकड़े बाग़ में घुसा। मैंने चिल्लाकर उसका ध्यान आकर्षित किया। वह मेरी ओर दौड़ा।

"आपको क्या हुआ, बाबू? आपका चेहरा बिल्कुल फ़क्क पड़ गया है। क्या किसी चीज़ ने डरा दिया आपको? यह जगह ही ऐसी है। कई लोग कहते हैं कि बाग़ के इस अंधेरे भाग में ..."

फ़क्क पड़नाः भय या सदमे से सफ़ेद हो जाना
ज़िक्रः चर्चा करना, किसी बारे में बात करना

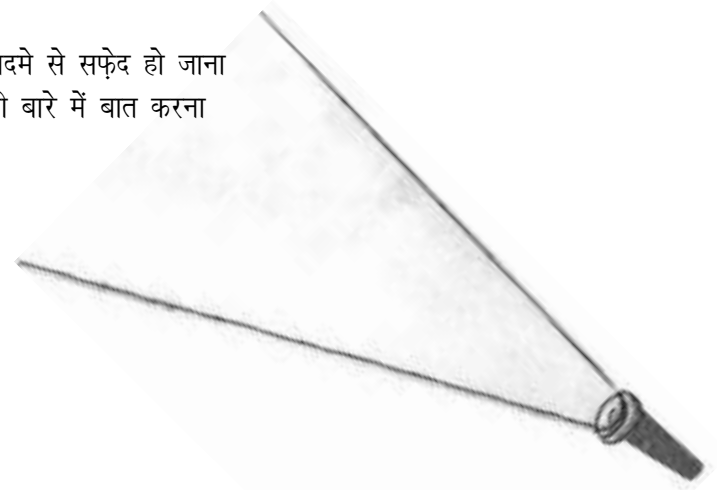

मैं उसे जवाब नहीं दे पाया। मुझे वह आदमी अब भी दिख रहा था।

"आप किसे देख रहे हैं, बाबू? इस पेड़ को? इसकी शाखाएँ उन्होंने अभी काटी हैं," उसने समझाया।

मैंने फिर देखा। हाँ, वह पेड़ ही था। उसे कुछ इस तरह काटा गया था कि उसका ऊपरी भाग बिल्कुल टोप जैसा दिख रहा था। मुझे अपने ऊपर शर्म आई। वह आदमी स्टेशन तक मेरे साथ रहा।

सोमवार को पहला काम मैंने यह किया कि सुधीर को उसका पदक लौटा दिया।

"मेरे दादू आपसे मिलना चाहते हैं। मैं आपको स्कूल के बाद अपने घर ले जाऊँगा।"

मुझे देखते ही सुधीर के दादू ने कहा, "शुक्र है भगवान का, आप सुरक्षित हैं! कल मुझे बहुत चिन्ता हुई जब सुधीर ने बताया कि आप वह पदक गाँव ले गए हैं।"

कुछ रुक कर वे बोले, “मेरे पिताजी को वह पदक एक अंग्रेज़ सिपाही ने दिया था, मेरे पैदा होने से पहले। उसने शराब के बदले इसे गिरवी रखा था, पर कभी वापस न ले सका।

“इस पदक पर एक श्राप है। मेरे साले ने एक बार इसे मुझसे ज़बरदस्ती ले लिया था अपने परिवार को दिखाने के लिए। उसी शाम, वह छत से गिरकर मर गया। यह पदक उसकी जेब में मिला था।”

फीकी, मशीनी आवाज़ में मैंने पूछा, “छत से? पदक जेब में था?”

“मैं आपसे झूठ नहीं बोलूँगा। जिसने भी एक-दो दिन के लिए इसे लिया, फ़ौरन् लौटा दिया। कहते थे कि उन्हें एक अजीब-सा डर महसूस होता था। हमारे परिवार के सिवा किसी में भी इस पदक की शक्ति को सहने की ताकत नहीं है। इसलिए मैं आपको पहले ही सावधान करना चाहता था।”

गिरवीः पैसों के लिए कोई चीज़ उधार रखना

उसी महीने, मैं फिर अपने गाँव गया। मैंने उस पेड़ को ढूँढने की कोशिश की जिसने मुझे उस रात इतना डरा दिया था, मगर ढूँढ न सका।

मैंने वह सड़क ढूँढने की कोशिश की जिस पर वह पेड़ खड़ा था। पर वहाँ कुछ भी नहीं था। न उस सड़क का कोई नामोनिशान, न ही उस पेड़ का।

सात रंगों का दिन है, सात दिनों के नाम लिखो।
इन रंगों के नाम लिखो, और बादलों मे वही रंग भरो।

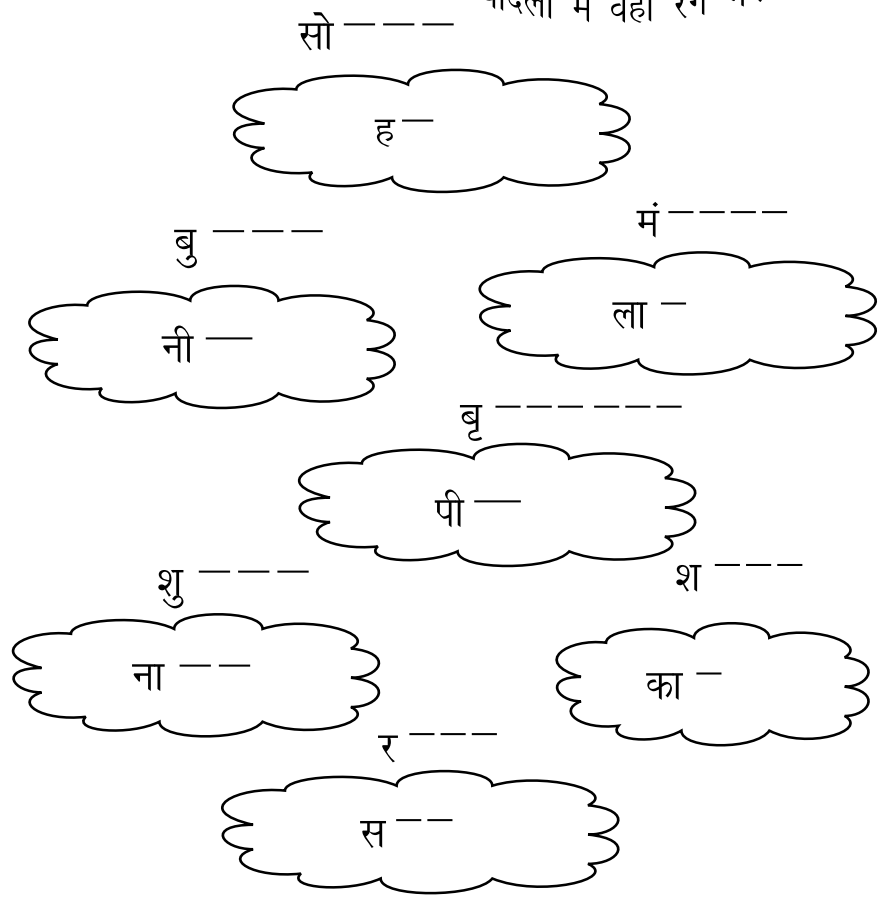

कहानी मे घटी घटनाओं का वर्णन करो।
क्या तुम्हारे साथ भी कभी कोई डरावनी घटना घटी है?
उसे एक कहानी के रूप में लिखो।
अपने मन से बनाकर भी लिख सकते हो।

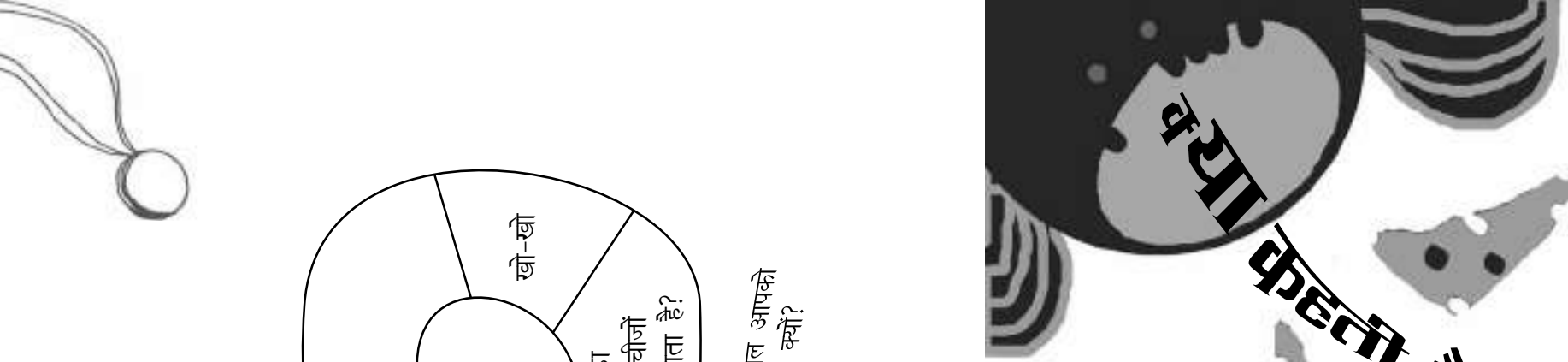

आओ खेलो! इस खेल को एक समय में दो खिलाड़ी खेल सकते हैं। गोटी से चाल चलते जाओ और इन खेलों के बारे में लिखते जाओ।

इनमें से कौन सा खेल आपको सबसे पसन्द है? क्यों?

क्या कहती है कहानी?

कभी लगता है जो कुछ हुआ वह सब झूठ था, सपना था। पर फिर लगता है, नहीं, मैंने वाक़ई देखा था उसे, और रोक न पाया था अपने आप को!

कथा नियमित रूप से पेड़ लगाती है उस लकड़ी के बदले जिससे हमारी किताबों को छापने का कागज़ बनता है।

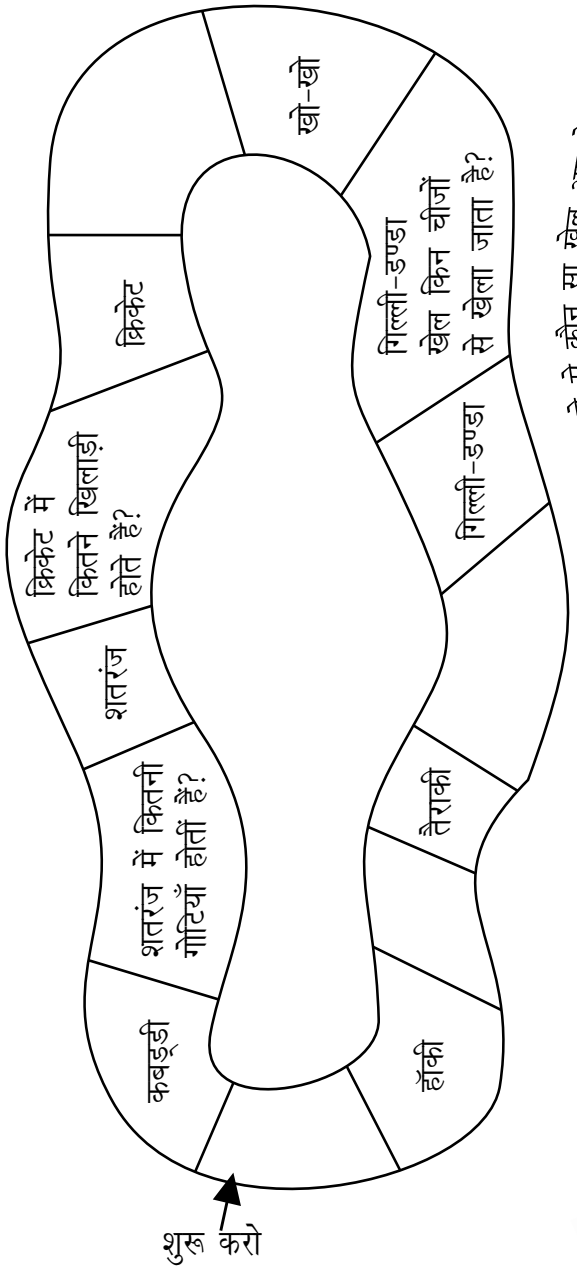

इस किताब की बिक्री से मिली राशि का 10% अल्पाधिकारी बच्चों के एक स्कूल, कथाशाला को दिया जाएगा।

युवकथा की अन्य दिलचस्प किताबें!

कभी लगता है जो कुछ हुआ वह सब झूठ था, सपना था। पर फिर लगता है, नहीं, मैंने वाक़ई देखा था उसे, और रोक न पाया था अपने आप को!